।। अथ श्रीसाईसच्चरित।। ।। अध्याय ३६ ।।

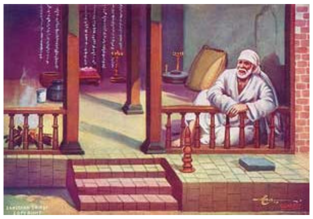

आश्चर्यजनक कथाएँ

(१) गोवा के दो सज्जन और (२) श्रीमती औरंगाबादकर।

इस अध्याय में गोवा के दो महानुभावों और श्रीमती औरंगाबादकर की अद्‌भुत कथाओं का वर्णन है।

गोवा के दो महानुभाव

एक समय गोवा से दो महानुभाव श्रीसाईबाबा के दर्शनार्थ शिरड़ी आए। उन्होंने आकर उन्हें नमस्कार किया। यद्यपि वे दोनों एक साथ ही आए थे, फिर भी बाबा ने केवल एक ही व्यक्ति से पन्द्रह रुपये दक्षिणा माँगी, जो उन्हें आदरसहित दे दी गई। दूसरा व्यक्ति भी उन्हें सहर्ष ३५ रुपये दक्षिणा देने लगा तो उन्होंने उसकी दक्षिणा लेना अस्वीकार कर दिया । लोगों को बड़ा आश्चर्य हुआ । उस समय शामा भी वहाँ उपस्थित थे । उन्होंने कहा कि '' देवा ! यह क्या, ये दोनों एक साथ ही तो आए हैं। इनमें से एक की दक्षिणा तो आप स्वीकार करते हैं और दूसरा जो अपनी इच्छा से भेंट दे रहा है, उसे अस्वीकृत कर रहे हैं? यह भेद क्यों ?'' तब बाबा ने उत्तर दिया कि '' शामा! तुम नादान हो । मैं किसी से कभी कुछ नहीं लेता। यह तो मस्जिदमाई ही अपना ऋण माँगती है और इसलिए देने वाला अपना ऋण चुकता कर मुक्त हो जाता है। क्या मेरे कोई घर, सम्पति या बाल-बच्चे हैं, जिनके लिए मुझे चिन्ता हो? मुझे तो किसी वस्तु की आवश्यकता नहीं है। मैं तो सदा स्वतंत्र हूँ । ऋण, शत्रुता तथा हत्या इन सबका प्रायश्चित अवश्य करना पड़ता है और इनसे किसी प्रकार भी छुटकारा संभव नहीं है। तब बाबा अपने विशष ढंग से इस प्रकार कहने लगेः-

'' अपने जीवन के पूर्वार्द्ध में ये महाशय निर्धन थे। इन्होंने ईश्वर से प्रतिज्ञा की थी कि यदि मुझे नौकरी मिल गई तो मैं एक माह का वेतन तुम्हें अर्पण करुँगा। इन्हें १५ रुपये माहवार की एक नौकरी मिल गई। फिर उत्तरोंत्तर उन्नति होते होते ३०,६०,१००, २०० और अन्त में ७०० रुपये तक मासिक वेतन हो गयां । परन्तु समृद्धि पाकर ये अपना वचन भूल गए और उसे पूरा न कर सके । अब अपने शुभ कर्मो के ही प्रभाव से इन्हें यहाँ तक पहुँचने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है । अतः मैने इनसे केवल पन्द्रह रुपये ही दक्षिणा माँगी, जो इनके पहले माह की पगार थी।''

दूसरी कथा

'' समुद्र के किनारे घुमते-घूमते मैं एक भव्य महल के पास पहुँचा और उसकी दालान में विश्राम करने लगा। उस महल के ब्राह्मण स्वामी ने मेरा यथोचित स्वागत कर मुझे बढ़िया स्वादिष्ट पदार्थ खाने को दिये । भोजन के उपरान्त उसने मुझे आलमारी के समीप एक स्वच्छ स्थान शयन के लिए बतला दिया और मैं वहीं सो गया। जब मैं प्रगाढ़ निद्रा में था तो उस व्यक्ति ने पत्थर खिसकाकर दीवार में सेंध डाली और उसके द्वारा भीतर घुसकर उसने मेरा खीसा कतर लिया। निद्रा से उठने पर मैंने देखा कि मेरे तीस हजार रुपये चुरा लिए गए हैं। मैं बड़ी विपत्ति में पड गया और दुःखित होकर रोता बैठ गया। केवल नोट ही नोट चुरा लिये थे, इसलिए मैंने सोचा कि यह कार्य उस ब्राह्मण के अतिरिक्त और किसी का नहीं है। मुझे खाना-पीना कुछ भी अच्छा न लगा और मैं एक पखवाड़े तक दालान में ही बैठे बैठे चोरी का दुःख मनाता रहा । इस प्रकार पन्द्रह दिन व्यतीत होने पर रास्ते से जाने वाले एक फकीर ने मुझे दूःख से बिलखते देखकर मेरे रोने का कारण पूछा। तब मैंने सब हाल उससे कह सुनाया। उसने मुझसे कहा कि यदि तुम मेरे आदेशानुसार आचरण करोगे तो तुम्हारा चुराया धन वापस मिल जाएगा । मैं एक फकीर का पता तुम्हें बताए देता हूँ। तुम उसकी शरण में जाओ और उसकी कृपा से तुम्हें तुम्हारा धन पुनः मिल जाएगा। परन्तु जब तक तुम्हें अपना धन वापस नहीं मिलता, उस समय तक तुम अपना प्रिय भोजन त्याग दो। मैंने

उस फकीर का कहना मान लिया और मेरा चुराया धन मिल गया। तब मैं समुद्र तट पर आया, जहाँ एक जहाज खड़ा था, जो यात्रियों से ठसाठस भर चुका था । भाग्यवश वहाँ एक उदार प्रकृतिवाले चपरासी की सहायता से मुझे एक स्थान मिल गया। इस प्रकार मैं दूसरे किनारे पर पहूँचा और वहाँ से मैं रेलगाड़ी में बैठकर मस्जिद माई आ पहुँचा।''

कथा समाप्त होते ही बाबा ने शामा से इन अतिथियों को अपने साथ ले जाने और भोजन का प्रबन्ध करने को कहा। तब शामा उन्हें अपने घर लिवा ले गया और उन्हें भोजन कराया । भोजन करते समय शामा ने उनसे कहा कि '' बाबा की कहानी बड़ी ही रहस्यपूर्ण है, क्योंकि न तो वे कभी समुद्र की ओर गए है और न उनके पास तीस हजार रुपये ही थे। उन्होंने न कहीं भी यात्रा ही की, न उनकी कोई रकम ही चुरायी गई और न वापस आई ।'' फिर शामा ने उन लोगों से पूछा कि '' आप लोगों को कुछ समझ में आया कि इसका अर्थ क्या था?'' दोनों अतिथियों की घिग्घियाँ बँध गई और उनकी आँखों से आँसुओं की धारा बहने लगी। उन्होंने रोते-रोते कहा कि '' बाबा तो सर्वव्यापी, अनन्त और परब्रह्म स्वरुप हैं। जो कथा उन्होंने कही है, वह बिलकुल हमारी ही कहानी है और वह मेरे ऊपर बीत चुकी है। यह महान् आश्चर्य है कि उन्हें यह सब कैसे ज्ञात हो गया ? भोजन के उपरान्त हम इसका पूर्ण विवरण आपको सुनाएँगे ।''

भोजन के पश्चात् पान खाते हुए उन्होंने अपनी कथा सुनाना प्रारम्भ कर दिया । उनमें से एक कहने लगाः- '' घाट में एक पहाड़ी स्थान पर हमारा निवास-स्थान है। मैं अपने जीवन-निर्वाह के लिए नौकरी ढूँढने गोवा आया था। तब मैंने भगवान् दत्तात्रेय को वचन दिया था कि यदि मुझे नौकरी मिल गई तो मैं तुम्हें एक माह की पगार भेंट चढ़ाऊँगा । उनकी कृपा से मुझे पन्द्रह रुपये मासिक की नौकरी मिल गई और जैसा कि बाबा ने कहा, उसी प्रकार मेरी उन्नति हुई। मैं अपना वचन बिलकुल भुल गया था। बाबा ने उसकी स्मृति दिलाई और मुझसे पन्द्रह रुपये वसूल कर लिए। आप लोग इसे दक्षिणा न समझें। यह तो एक पुराने ऋण का भुगतान है तथा दीर्घ काल से भूली हुई प्रतिज्ञा आज पूर्ण हुई है।

शिक्षा

यथार्थ में बाबा ने कभी किसी से पैसा नहीं माँगा और न ही अपने भक्तों को ही माँगने दिया। वे आध्यात्मिक उन्नति में कांचन को बाधक समझते थे और भक्तों को उसके पाश से सदैव बचाते रहते थे। भगत म्हालसापति इसके उदाहरणस्वरुप हैं। वे बहुत निर्धन थे और बड़ी कठिनाई से ही अपना जीवन बिताते थे। बाबा उन्हें कभी पैसा माँगने नहीं देते थे और न ही वे अपने पास की दक्षिणा में से उन्हें कुछ देते थे। एक बार एक दयालु और सह्रदय व्यापारी हंसराज ने बाबा की उपस्थिति में ही एक बड़ी रकम म्हालसापति को दी, परन्तु बाबा ने उनसे उसे अस्वीकार करने को कह दिया।

अब दूसरा अतिथि अपनी कहानी सुनाने लगा। '' मेरे पास एक ब्राह्मण रसोइया था, जो गत ३५ वर्षो से ईमानदारी से मेरे पास काम करता आया था। बुरी आदतों में पड़कर उसका मन पलट गया और उसने मेरे सब रुपये चोरी कर लिए। मेरी आलमारी दीवार में लगी थी और जिस समय हम लोग गहरी नींद में थे, उसने पीछेसे पत्थर हटा कर मेरे सब तीन हजार रुपयों के नोट चुरा लिए। मैं नहीं जानता कि बाबा को यह ठीक-ठीक धन-राशि कैसे ज्ञात हो गई? मैं दिन-रात रोता और दुःखी रहता था। एक दिन जब मैं इसी प्रकार निराश और उदास होकर बरामदे में बैठा था, उसी समय रास्ते से जाने वाले एक फकीर ने मेरी स्थिति जानकर मुझसे इसका कारण पूछा। मैंने उसे सब हाल कह सुनाया। तब उसने बताया कि कोपरगाँव तालुके के शिरड़ी ग्राम में श्री साईबाबा नाम के एक औलिया रहते हैं। उन्हें वचन दो तथा अपना रुचिकर भोज्य पदार्थ त्याग, मन में कहो कि जब तक मैं तुम्हारा दर्शन न कर लूँगा, उस पदार्थ को कदापि न खाऊँगा। तब मैंने चावल खाना छोड़ दिया और बाबा को वचन दिया, ''बाबा! जब तक मुझे तुम्हारे दर्शन नहीं होते तथा मेरी चुराई गई धन राशि नहीं मिलती, तब तक मैं चावल ग्रहण न करुँगा।'' इस प्रकार जब पन्द्रह दिन बीत गए, तब वह ब्राह्मण स्वयं ही आया और सब धनराशि लौटाकर क्षमायाचनापूर्वक कहने लगा कि मेरी मति ही भ्रष्ट हो गई थी, जो मुझसे अपका ऐसा अपराध बन गया है । मैं आपके पैर पड़ता हूँ। मुझे क्षमा करें। इसप्रकार सब ठीक-ठाक हो गया। जिस फकीर से मेरी भेंट हुई थी तथा जिसने मुझे सहायता पहुँचाई थी, वह फकीर फिर मेरे देखने में कभी नहीं आया। मेरे मन में श्री साईबाबा के दर्शन की, जिनके लिए फकीर ने मुझसे कहा था, बड़ी तीव्र उत्कंठा हुई। मैंने सोचा कि जो फकीर मेरे घर पर आया

था, वह साईबाबा के अरिरिक्त अन्य कोई नहीं हो सकता। जिन्होंने मुझे कृपाकर दर्शन दिये और मेरी इस प्रकार सहायता की, उन्हें ३५ रुपये का लालच कैसे हो सकता है ? इसके विपरीत वे अहेतुक ही आध्यात्मिक उन्नति के पथ पर ले जाने का पूरा प्रयत्न करते हैं।''

'' जब चोरी गई राशि मुझे पुनःप्राप्त हो गई, तब मेरे हर्ष का पारावार न रहा। मेरी बुद्धि भ्रमित हो गई और मैं अपना वचन भूल गया। कुलाबा में एक रात्रि को मैंने साईबाबा को स्वप्न में देखा। तभी मुझे अपनी शिरड़ी यात्रा के वचन की स्मृति हो आई। मैं गोवा पहुँचा और वहाँ से एक स्टीमर द्वारा बम्बई पहुँच कर शिरड़ी जाना चाहता था। परन्तु जब मैं किनारे पर पहुँचा तो देखा कि स्टीमर खचाखच भर चुका है और उसमें बिलकुल भी जगह नहीं है। कैप्टन ने तो मुझे चढ़ने न दिया, परन्तु एक अपरिचित चपरासी के कहने पर मुझे स्टीमर में बैठने की अनुमति मिल गई और मैं इस प्रकार बम्बई पहुँचा। फिर रेलगाड़ी में बैठकर यहाँ पहुँच गया। बाबा के सर्वव्यापी और सर्वज्ञ होने में मुझे कोई शंका नहीं है। देखो तो, हम कौन हैं और कहाँ हमारा घर? हमारे भाग्य कितने अच्छे हैं कि बाबा हमारी चुराई गई राशि वापस दिलाकर हमें यहाँ खींच कर लाए। **आप शिरड़ीवासी हम लोगों की अपेक्षा सहस्त्रगुने श्रेष्ठ और भाग्यशाली हैं, जो बाबा के साथ हँसते-खेलते, मधुर भाषण करते और कई वर्षों से उनके समीप रहते हो। यह आप लोगों के गत जन्मों के शुभ संस्कारों का ही प्रभाव है, जो कि बाबा को यहाँ खींच लाया है।** श्री साई ही हमारे लिए दत्त हैं। उन्होंने ही हमसेप्रतिज्ञा कराई तथा जहाज में स्थान दिलाया और हमें यहाँ लाकर अपनी सर्वव्यापकता और सर्वज्ञता का अनुभव कराया।''

श्रीमती औरंगाबादकर

सोलापुर के सखाराम औरंगाबादकर की पत्नी २७ वर्ष की दीर्घ अवधि के पश्चात् भी निःसन्तान ही थीं । उन्होंने सन्तानप्राप्ति के निमित्त देवी और देवताओं की बहुत मन्नते की, परन्तु फिर भी उनकी मनोकामना सिद्ध न हुई। तब वे सर्वथा निराश होकर अन्तिम प्रयत्न करने के विचार से अपने सौतेले पुत्र श्री विश्वनाथ को साथ ले शिरड़ी आईं और वहाँ बाबा की सेवा कर, दो माह रुकीं। जब भी वे मस्जिद को जातीं तो बाबा को भक्त-गण से घिरे हुए पातीं। उनकी इच्छा बाबा से एकान्त में भेट कर सन्तानप्राप्ति के लिये प्रार्थना करने की थी, परन्तु कोई योग्य अवसर उनके हाथ न लग सका। अन्त में उन्होंने शामा से कहा कि '' जब बाबा एकान्त में हों तो मेरे लिए प्रार्थना कर देना।'' शामा ने कहा कि '' बाबा का तो खुला दरबार है। फिर भी यदि तुम्हारी ऐसी ही इच्छा है तो मैं अवश्य प्रयत्न करूँगा, परन्तु यश देना तो ईश्वर के हाथ है। भोजन के समय तुम आँगन में नारियल और उदबत्ती लेकर बैठना और जब मैं संकेत करुँ तो खड़ी हो जाना।'' एक दिन भोजन के उपरान्त जब शामा बाबा के गीले हाथ तौलिये से पोंछ रहे थे, तभी बाबा ने उनके गालपर चिकोटी काट ली। तब शामा क्रोधित होकर कहने लगे कि ''देवा ! यह क्या आपके लिए उचित है कि आप इस प्रकार मेरे गालपर चिकोटी काटें? मुझे ऐसे शरारती देव की बिलकुल आवश्यकता नहीं, जो इस प्रकार का आचरण करे। हम आप पर आश्रित हैं, तब क्या यही हमारी घनिष्ठता का फल है?'' बाबा ने कहा, '' अरे! तुम तो ७२ जन्मों से मेरे साथ हो। मैंने अब तक तुम्हारे साथ ऐसा कभी नहीं किया। फिर अब तुम मेरे स्पर्श को क्यों बुरा मानते हो?'' शामा बोले कि '' मुझे तो ऐसा देव चाहिए, जो हमें सदा प्यार करे और नित्य नया-नया मिष्ठान्न खाने को दे। मैं तुमसे किसी प्रकार के आदर की इच्छा नहीं रखता और न मुझे स्वर्ग आदि ही चाहिए। मेरा तो विश्वास सदैव तुम्हारे चरणों में ही जागृत रहे, यही मेरी अभिलाषा है।''तब बाबा बोले कि '' हाँ, सचमुच मैं इसीलिए यहाँ आया हूँ। मैं सदैव तुम्हारा पालन और उदरपोषण करता आया हूँ, इसीलिए मुझे तुमसे अधिक स्नेह है।''

जब बाबा अपनी गादी पर विराजमान हो गए, तभी शामा ने उस स्त्री को संकेत किया। उसने ऊपर आकर बाबा को प्रणाम कर उन्हें नारियल और ऊदबत्ती भेंट की। बाबा ने नारियल हिलाकर देखा तो वह सूखा था और बजता था। बाबा ने शामा से कहा कि ''यह तो हिल रहा है। सुनो, यह क्या कहता है?'' तभी शामा ने तुरन्त कहा कि '' यह बाई प्रार्थना करती हैं कि ठीक इसी प्रकार इनके पेट में भी बच्चा गुड़गुड़ करे, इसलिए आशीर्वादसहित यह नारियल इन्हें लौट दो। '' तब फिर बाबा बोले कि '' क्या नारियल से भी सन्तान की उत्पत्ति होती है? लोग कैसे मूर्ख हैं, जो इस प्रकार की बातें गढ़ते हैं।'' शामा ने कहा कि'' मैं आपके वचनों और आशीष की शक्ति से पूर्ण अवगत हूँ और आपके एक शब्द मात्र से ही इस बाई को बच्चों का ताँता लग जाएगा। आप तो टाल रहे हैं और आशीर्वाद नहीं दे रहे हैं। इस प्रकार कुछ देर तक वार्त्तालाप चलता रहा। बाबा बार-बार नारियल फोड़ने को कहते थे, परन्तु शामा बार-बार यही हठ पकड़े हुए थे कि इसे उस बाई को दे दें। अन्त में बाबा ने कह दिया कि '' इसको

पुत्र की प्राप्ति हो जाएँगी।'' तब शामा ने पूछा कि '' कब तक?'' बाबा ने उत्तर दिया कि ''१२ मास में।'' अब नारियल को फोड़कर उसके दो टुकड़े किये गए। एक भाग तो उन दोनों ने खाया और दूसरा भाग उस स्त्री को दिया गया।

तब शामा ने उस बाई से कहा कि '' प्रिय बहिन ! तुम मेरे वचनों की साक्षी हो। यदि १२ मास के भीतर तुमको सन्तान न हुई तो मैं इस देव के सिर पर ही नारियल फोड़कर इसे मस्जिद से निकाल दूँगा और यदि मैं इसमें असफल रहा तो मैं अपने को माधव नहीं कहूँगा। जो कुछ भी मैं कह रहा हूँ, इसकी सार्थकता तुम्हें शीघ्र ही विदित हो जाएगी।''

एक वर्ष में ही उसे पुत्ररत्न की प्राप्ति हुई और जब वह बालक पाँच मास का था, उसे लेकर वह अपने पतिसहित बाबा के श्री चरणों में उपस्थित हुई। पति-पत्नी दोनों ने उन्हें प्रणाम किया और कृतज्ञ पिता (श्रीमान् औरंगाबादकर) ने पाँच सौ रुपये भेंट किए, जो बाबा के घोड़े श्याम कर्ण के लिए छत बनाने के काम आए।

।। श्री सद्‌गुरु साईनाथार्पणमस्तु। शुभं भवतु ।।